



2022:सीजीएचसी:11996

सी आर ए No.1273/2015

- 1 -

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय बिलासपुर

सी आर ए No.1273/2015

✓ अभय मिरी , उम्र लगभग 39 वर्ष ,
साकिन ग्राम कुशमुल बराहीपारा थाना डभरा
जिला जांजगीर चांपा (छ. ग.)

.....अपीलकर्ता

बनाम

1. छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा आरक्षी केन्द्र मालखरौदा,
जिला जांजगीर चांपा (छ. ग.)

..... उत्तरवादीगण

अपीलकर्ता हेतु : श्री विकास पाण्डेय, अधिवक्ता।

उत्तरवादीगण हेतु : श्री आशुतोष मिश्रा, शासकिय अधिवक्ता।

डी० बी० माननीय न्यायमूर्ति श्री मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव

एवं माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती विमला सिंह कपूर

बोर्ड पर आदेश

[07/09/2021]

माननीय न्यायमूर्ति श्री मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव के अनुसार

1. वर्तमान अपील विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश सक्ती जिला जांजगीर चांपा के दोषसिद्धी के निर्णय एवं दंडादेश दिनांक 09/02/2021 के आदेश के विरुद्ध दायर की गई है जिसके द्वारा जिसके अन्तर्गत अपीलकर्ता को



भा०दं०सं० की धारा 302,324 के अन्तर्गत दंडनीय अपराध को कारित करने हेतु दोषसिद्ध ठहराया गया है एवं दंडादेश निम्नानुसार है –

दोषसिद्धी	दंडादेश
धारा 302 भा०दं०सं० अन्तर्गत	आजीवन कारावास एवं 500/- रुपये जुर्माना एवं जुर्माने की व्यतिक्रम में 3 माह का अतिरिक्त सश्रम कारावास ।
धारा 324 भा०दं०सं० अन्तर्गत	6 माह का सश्रम कारावास ।

2. प्रकरण के अभिलेख से अभियोजन कथा सामने आई कि मृतिका ऋतु की माँ मीना बाई (PW 01) ने दिनांक 20/09/2010 को सुबह 07.00 बजे EX.P-02 में एफ०आई०आर० दर्ज कराई जिसमें यह कहा गया था कि पिछली रात लगभग 08.00 बजे अपीलकर्ता, उसका दामाद कमरे के अंदर गये तथा जब खाना बनाने की तैयारी चल रही थी उसने एक झगड़े की आवाज सुनी और फिर वह अंदर गया और उसने पाया कि अपीलकर्ता ने उसकी बेटी ऋतु पर कुल्हाड़ी से हमला कर रहा था जिसके कारण ऋतु को कई प्रकार की चोटें आईं और वह खाट पर गिर गई । एफ०आई०आर० दर्ज करने के बाद पुलिस घटनास्थल पर गई और प्रशासन को भी सूचित किया गया जिसके परिणामस्वरूप कार्यपालक मजिस्ट्रेट अनुपम तिवारी (PW 12) मौके पर पहुंचे, गवाहों को नोटिस दिये और EX.P10 में मृत शरीर की मृत्यु



जांच तैयार की। मृत शरीर मीना बाई (PW 01) के घर में पाया गया था। उसे पोस्टमार्टम के लिए भेजा गया था और डॉ० आर०पी० कुर्रे (PW 10) ने शव परीक्षण कि और EX.P 14 में रिपोर्ट तैयार की। मृतक के शरीर में तीन चोटे पाई गई। उन्हें ओसीसीपिटल भाग पर एक कटी हुई चोट के रूप में वर्णित किया गया था जहां हड्डी टूट गई थी और मस्तिष्क का पदार्थ बाहर आ गया था। दूसरी बाई कान की हड्डी पर कटी हुई चोट थी और तीसरी गर्दन की बाई ओर चोट थी। डॉ० द्वारा बताई गई मृत्यु का कारण अत्यधिक रक्त स्राव था जिससे सदमा लगा और मृत्यु हो गई और डॉ० के अनुसार इसकी प्रकृति मानववध थी।

3. उस दिन, मीना बाई (PW 1) जिसने एफ०आई०आर० दर्ज कराई थी ने शिकायत की कि उसके साथ भी अपीलकर्ता ने मारपीट की है। उसकी जांच डॉ० आर०पी० कुर्रे (PW 10) द्वारा की गई थी। उसकी चिकित्सीय परीक्षण में हाथ के सीधे तरफ के अल्नाबोल हड्डी में फ्रैक्चर पाया गया था और बाहरी चोट के रूप में उसके सीधे कलाई में बहुत सारी खरोचें और नील था और वह छाती में दर्द होने की शिकायत भी की थी। सामान्य अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात चालान पेश किया गया था और विद्वान विचारण न्यायालय ने अभिकथित अपराध के कारित करने के लिए अपीलकर्ता को भा०द०सं० की धारा 302, 326 के अन्तर्गत आरोपित करते हुए कि उसने अपनी खुद की पत्नी की मृत्यु कारित की थी तथा इस अभियोग पर की उसने अपनी सास मीना बाई को कुल्हाड़ी से मारा था, अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित किये थे। अपीलार्थी द्वारा दोषसिद्धि से इंकार किये जाने पर उसका विचारण



किया गया था । अपना मामला प्रमाणित करने हेतु अभियोजन ने 14 साक्षियों का परीक्षण कराया जिसमें चक्षुदर्शी साक्षी मीना बाई(PW 1) तथा मृतक की बहन किरण (PW 8) शामिल थे । जिसके पश्चात अपीलार्थी को द०प्र०सं० की धारा 313 के अन्तर्गत परीक्षण कराया गया था जिसमें उसने अपराध कारित करना अस्वीकार किया, परन्तु बचाव साक्षी का परीक्षण नहीं कराया गया था । विद्वान विचारण न्यायालय ने अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किये गये साक्ष्य पर विश्वास कर अपीलार्थी को उपरोक्त वर्णित अपराध को कारित करने के लिए दोषसिद्ध करार दिया था जिससे वर्तमान अपील उत्पन्न हुई ।

4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने स्पष्ट रूप से तर्क किया कि वर्तमान प्रकरण में यद्यपि सास मीना बाई (PW 1) तथा ननद किरण (PW 8) के साक्ष्य से पता चलता है कि अपीलार्थी ने स्वयं की पत्नी को कुल्हाड़ी से मारकर मृत्यु कारित की, लेकिन घटना के पृष्ठभूमि और उत्पत्ति और अपीलार्थी और मृतक की स्थिति अभियोजन पक्ष के गवाहों द्वारा उजागर की गई है । यह अपीलार्थी के सजा को धारा 302 भा०दं०सं० से धारा 304 भा०दं०सं० में बदलने का मामल बनता है । अपने तर्क को विस्तार से बताते हुए अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया कि अभियोजन साक्षियों ने यह कथन किया है कि घटना के दिन अपीलार्थी अपने ससुराल आया था जहां उसकी पत्नी पहले से रह रही थी और उस दिन पति-पत्नी के बीच कोई झगड़ा नहीं हुआ था । गवाहों के साक्ष्य इस प्रभाव के हैं कि अपीलार्थी को उसकी सास द्वारा रातभर रुकने और रात्रि भोज का आतिथ्य स्वीकार करने का अनुरोध किया था । जिसे अपीलकर्ता ने स्वीकार कर लिया था जिसके



पश्चात वह खरीददारी करने बाजार गया था और यह भी साक्ष्य है कि अपीलार्थी और उसकी पत्नी दोनों ने ही मदिरापान किया था और घर वापस आये थे । घटना घर में तब हुई जब मृतक की पत्नी के नाना आए । वहां पर उन्होंने अपीलकर्ता को डांटा और थप्पड़ भी मारा क्योंकि उन्होंने ऋतु (मृतक) को शराब क्यों दी, जिसके कारण कुछ विवाद हुआ और मृतक अपने पति के दादा द्वारा किये गए व्यवहार से खुश नहीं थी और वह कमरे के अंदर चली गई और गवाहों के अनुसार, पति और मृतक के बीच झगड़ा भी हुआ था । उन्होंने कहा कि ऐसी पृष्ठभूमि में, जब अपीलकर्ता और मृतक के बीच सौहार्द्रपूर्ण संबंध थे, उन्होंने शराब पी थी, रात के खाने में पकाने के लिए बाजार से चिकन खरीदा था, इससे पता चलता है कि जो कुछ भी हुआ वह या तो थप्पड़ की घटना के परिणामस्वरूप अचानक गंभीर उत्तेजना के कारण हुआ था ।

".....केवल अभ्यावेदन दाखिल करने से सीमा की अवधि नहीं बचेगी। इस प्रश्न को निर्धारित करने हेतु कि क्या किसी आवेदक द्वारा किया गया दावा विचार के योग्य है, विलंब या अड़चन , न्यायालय हेतु एक सुसंगत तथ्य है। शासकीय कर्मचारी की ओर से विलम्ब और/या अड़चन उसे उस लाभ से वंचित कर सकती हैं जो दूसरों को दिया गया था । भारत के संविधान का अनुच्छेद 14, उस प्रकृति की स्थिति में, आकर्षित नहीं होगा क्योंकि यह सर्वविदित है कि विधि उन लोगों के पक्ष में है जो सतर्क तथा सावधान हैं।"

5. पी. एस. सदाशिवस्वामी विरुद्ध तमिलनाडु राज्य "[1975 (1) एस. सी. सी. 152], के मामले में। यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है:—



“ ऐसा नहीं है कि न्यायालयों हेतु अनुच्छेद 226 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने की कोई सीमा अवधि है और न ही ऐसा कोई मामला हो सकता है जिसमें न्यायालय एक निश्चित समय के बीत जाने के पश्चात किसी मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। परंतु न्यायालयों हेतु यह अपने विवेक के प्रयोग करने का विवेकपूर्ण तथा सही अभ्यास होगा कि वे उन व्यक्तियों के मामले में अनुच्छेद 226 के तहत अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करने से इंकार करें जो अनुतोष हेतु शीघ्रता से उन तक नहीं पहुंचते हैं तथा जो खड़े रहते हैं तथा चीजों को होने देते हैं तथा फिर पुराने दावों को सामने रखने तथा सुलझे हुए मामलों को अस्थिर करने की कोशिश करने हेतु न्यायालय तक पहुंचते हैं ।

इसलिए, याचिकाकर्ता की याचिका को आरंभ से खारिज कर दिया जाना चाहिए था। इस तरह की याचिकाओं का मनोरंजन करना न्यायालय के समय की बर्बादी है। यह न्यायालय के कार्य में बाधा डालता है तथा वैध शिकायतों पर विचार करने के साथ-साथ उसके सामान्य कार्य में भी बाधा डालता है। हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय अपीलार्थी की याचिका के साथ-साथ अपील को भी खारिज करने में सही था।”

6. अभी हाल ही में चेन्नई महानगर जल आपूर्ति तथा सीवरेज बोर्ड तथा अन्य विरुद्ध टी. टी. मुरली बाबू "[2014 (4) एस. सी. सी. 108], के मामले में।

माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया है कि विलंब से दूसरों के परिपक्व अधिकारों पर प्रभाव पड़ सकता है तथा अनावश्यक रूप से दूसरों को मुकदमेबाजी में घसीटा जा सकता है, तथा अपनी राय निम्नानुसार व्यक्त की है:



“16. इस प्रकार, विलंब तथा असावधानी के सिद्धांत को हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए। एक रिट न्यायालय को दिए गए स्पष्टीकरण तथा उसकी स्वीकार्यता पर विचार करने की आवश्यकता होती है। न्यायालय को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह एक असाधारण तथा न्यायसंगत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कर रहा है। एक संवैधानिक न्यायालय होने के नाते नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करने का न्यायालय का कर्तव्य है, परंतु साथ ही साथ यह स्वयं को इस प्राथमिक सिद्धांत के प्रति जीवित रखना है कि जब कोई पीड़ित व्यक्ति, पर्याप्त कारण के बिना, अपने आराम या आनंद से न्यायालय का दरवाजा खटखटाता है, तो न्यायालय इस बात की जांच करने के लिए कानूनी दायित्व के तहत होगा कि क्या विलंबित स्तर पर विलंब पर विचार किया जाना चाहिए या नहीं। यह ध्यान दिया जाना चाहिये कि विलंब समता के रास्ते में आता है। कुछ परिस्थितियों में विलम्ब तथा असावधानी घातक नहीं हो सकते हैं, परंतु अधिकतर परिस्थितियों में अत्यधिक विलम्ब केवल उस याचिकाकर्ता हेतु आपदा को आमंत्रित करेगा जो न्यायालय के दरवाजे पर दस्तक देता है। विलंब एक याचिकाकर्ता की निष्क्रियता तथा अकर्मण्यता को दर्शाती है— एक याचिकाकर्ता जो बुनियादी मानदंडों को भूल गया है, अर्थात्, “विलंब समय का सबसे बड़ा चोर है” तथा दूसरा, विधि किसी को फीनिक्स की तरह सोने तथा उठने की अनुमति नहीं देता है। विलंब से खतरा पैदा होता है तथा मुकदमें को क्षति पहुँचाता है।”





7. एक मामले में जहां एकल पीठ ने स्थिरता के आधार पर रिट याचिका को खारिज कर दिया था, खंड पीठ ने पैरा-12 से 14 में इसकी पुष्टि करते हुए अभिनिर्धारित किया है:

जहां तक ए०बी०एल इंटरनेशनल लिमिटेड के आधार पर अपीलार्थी के तर्क का संबंध है, गोदावरी शुगर मील्स लिमिटेड विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य 2011 (SCC) 439 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने शुगन मल (सुप्रा) यु०पी० प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड विरुद्ध कनोरिया इंडस्ट्रियल लिमिटेड (2001) 2 (SCC) 549 एवं ए०बी०एल इंटरनेशनल लिमिटेड सुप्रा सहित विषय पर संपूर्ण केस विधि पर विचार करने के बाद रिट याचिका की स्थिरता के बारे में विधिक स्थिति को निम्नलिखित रूप से स्पष्ट किया है।

— (i) समान्यतः याचिकाकर्ताओं को देय राशि का भुगतान करने के लिए अनुबंध या अपकृत्य के उल्लंघन से उत्पन्न सिविल दायित्व को प्रवर्तित करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत याचिका पर विचार नहीं किया जाएगा। पीड़ित पक्ष को दीवानी मुकदमे में सवाल का विरोध करना होगा। परंतु राज्य या उसके अधिकारियों के वैधानिक कार्यों को प्रवर्तित करने हेतु एक रिट कार्यवाही में धन के भुगतान का आदेश दिया जा सकता है।

(ii) यदि किसी अधिकार का उल्लंघन किया गया है—चाहे वह मौलिक अधिकार हो या वैधानिक अधिकार तथा पीड़ित पक्ष अधिकार के प्रवर्तन हेतु न्यायालय में आता है, तो यह पूरी तरह से अनुतोष नहीं देगा यदि न्यायालय केवल ऐसे अधिकार के अस्तित्व या इस तथ्य की घोषणा करता है कि



मौजूदा अधिकार का उल्लंघन किया गया है। उच्च न्यायालय, मौलिक या वैधानिक अधिकारों को लागू करते समय, विधि के अधिकार के बिना सरकार द्वारा प्राप्त धन के भुगतान का आदेश देकर परिणामीक राहत देने की शक्ति रखता है।

(iii) परमादेश रिट जारी करने हेतु याचिका पर समान्यतः केवल धन की वापसी का आदेश देने के उद्देश्य से विचार नहीं किया जाएगा, जिसे वापस करने का याचिकाकर्ता अधिकार का दावा करता है। धनवापसी की मांग करने वाले पीड़ित पक्ष को राशि का दावा करने हेतु दीवानी न्यायालय का दरवाजा खटखटाना पड़ता है, हालांकि उच्च न्यायालयों के पास धन के भुगतान हेतु अनुच्छेद 226 के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए उचित आदेश पारित करने की शक्ति है।

(iv) उन मामलों के मध्य अंतर है जहां एक दावेदार केवल धनवापसी प्राप्त करने के अनुतोष हेतु उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाता है तथा जहां निर्धारण आदि के आदेश को निरस्त करने के पश्चात् पारिणामीक अनुतोष के रूप में धनवापसी की मांग की जाती है। जबकि अवैध रूप से एकत्र किए गए अभिकथित धन को वापस करने हेतु राज्य को केवल परमादेश रिट जारी करने की प्रार्थना करने वाली याचिका सामान्य रूप से स्थिर रखने योग्य नहीं है, यदि अभियोजन यह है कि मूल्यांकन क्षेत्राधिकार के बिना था तथा एकत्र किया गया कर विधि के अधिकार के बिना था तथा इसलिए उत्तरदाताओं को विधि के किसी भी अधिकार के बिना एकत्र किए गए धन को बनाए रखने का



कोई अधिकार नहीं था, उच्च न्यायालय के पास रिट याचिका में धनवापसी का निर्देश देने की शक्ति है।

(v) यह कहना एक बात है कि उच्च न्यायालय के पास अनुच्छेद 226 के तहत अवैध रूप से एकत्र किए गए धन की वापसी हेतु परमादेश रिट जारी करने की कोई शक्ति नहीं है। यह कहना अलग बात है कि इस तरह की शक्ति का उपयोग प्रत्येक मामले के तथ्यों तथा परिस्थितियों के आधार पर संयम से किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, जहां तथ्य विवाद में नहीं हैं, जहां धन का संग्रह विधि के अधिकार के बिना था, वहां नागरिकों को धनवापसी की राहत से इनकार करने का कोई उचित कारण नहीं है;

(vi) जहां मुकदमें का सार्वजनिक विधि चरित्र है या इसमें राज्य या उसके प्राधिकरणों की ओर से सार्वजनिक विधि कार्यों से उत्पन्न होने वाला कोई प्रश्न शामिल है, वहां सार्वजनिक विधि उपचार के माध्यम से न्याय तक पहुंच से इनकार नहीं किया जाएगा।

13. उपरोक्त सिद्धांतों को भी लागू करते हुए, जिस रिट याचिका से यह अपील उत्पन्न होती है, उसमें प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी के साथ एक समझौते के तहत देशे राशि का दावा करते हुए अवैध रूप से धन की कटौती करने की शिकायत कि गई है, तथा अपीलार्थी के बकाया राशि में से वापसी की राहत का दावा किया गया है जो विचारणीय नहीं है। इस संबंध में स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड विरुद्ध पंजाब एंड सिंध बैंक एम. ए. एन. यू./डी. ई./6261/2012 तथा चक्रदार ऑटो उद्योग प्राइवेट लिमिटेड विरुद्ध इंजीनियरिंग निर्यात संवर्धन परिषद एम. ए. एन. यू./डी. ई./4248/2012



में इस न्यायालय की खंडपीठों के निर्णयों तथा के. एल. ए. इंडिया पब्लिक लिमिटेड एक्सपोर्ट क्रेडिट गारंटी कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड 183 (2011) डी. एल. टी. 591 में हममें से एक (राजीव सहाय एंडलॉ, जे) के निर्णय का संदर्भ भी लिया जा सकता है।

14. इसलिए हम इस आधार पर रिट याचिका की स्थिरता के लिए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए तर्कों में कोई त्रुटि नहीं पाते हैं। "

8. हम इस बात पर ध्यान दे सकते हैं कि इस संबंध में निर्णयों के एक समूह के माध्यम से विकसित विधि यह है कि विशुद्ध संविदात्मक मामलों में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट का असाधारण अनुतोष लागू नहीं किया जा सकता है, तथा ऐसे उपचार सीमित क्षेत्र में केवल तभी उपलब्ध होते हैं जब संविदाकारी पक्ष यह प्रदर्शित करने में सक्षम होता है कि वह जिस अनुतोष का आह्वान करना चाहता है वह एक सार्वजनिक विधि उपचार है, जो एक अनुबंध के तहत एक निजी विधि उपचार के विपरीत है।

9. इस संबंध में विधिक स्थिति यह है कि जहां इन अधिकारों को चुनौती देने की मांग की जा रही है वे पूर्णतः व्यक्तिगत हैं, वहां किसी भी परमादेश का दावा नहीं किया जा सकता है, तथा भले ही राज्य या उसके किसी भी साधन के विरुद्ध अनुतोष चाहा गया हो, तो परमादेश रिट जारी करने हेतु पूर्वभाव शर्त एक सार्वजनिक कर्तव्य है। विशुद्ध संविदात्मक संबंध पर आधारित विवाद में कोई सार्वजनिक कर्तव्य तत्व नहीं होने के कारण, परमादेश रिट लागू नहीं होगा।



10. एक व्यक्तिगत अनुबंध की शर्तों से संबंधित विवाद के संदर्भ में अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका की स्वीकार्यता को ध्यान में रखते हुए, जहां अनुबंध के शर्तों के अनुसार बिलों से कोई कटौती करने से अधिकारियों को रोकने के लिये परमादेश मांगा गया था, इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य विरुद्ध ब्रिज एंड रूफ कंपनी (इंडिया) लिमिटेड, में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उचित मार्ग यह होगा कि मामले को मध्यस्थता या वाद की स्थापना के लिए भेजा जाए ना कि रिट याचिका दायर की जाए। यह इस प्रकार देखा गया:

"15. हमारी राय में, प्रत्यर्थी द्वारा अपनाया गया उपचार ही गलत है। यह इन कार्यवाहियों में यानी उसके द्वारा दायर रिट याचिका में किसी भी अनुतोष का हकदार नहीं है। उच्च न्यायालय दोनों पक्षों द्वारा रिट याचिका में उठाए गए कई तर्कों में से किसी पर भी निर्णय नहीं देने तथा केवल धारा 8-डी (1) के परंतुक के तहत किए गए उपायुक्त के आदेश के प्रभाव को केवल दोहराने में सही प्रतीत होता है।"

11. संविदात्मक अधिकार के प्रवर्तन हेतु अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका की स्थिरता के प्रश्न पर निर्णय लेने हेतु तथ्य-स्थिति के पक्ष तथा विपक्ष हेतु सावधानीपूर्वक तौला जाना चाहिए। रिट अधिकार क्षेत्र में किसी दावे को कब लागू किया जा सकता है, इस प्रश्न का निर्धारण कई कारकों पर विचार करने पर निर्भर करेगा, जैसे कि क्या रिट याचिकाकर्ता केवल अपने संविदात्मक अधिकारों को लागू करने का प्रयास कर रहा है या मामला विधि तथा



संवैधानिक मुद्दों के महत्वपूर्ण प्रश्न उठाता है, उठाये विवाद की प्रकृति; विवाद के निर्धारण हेतु आवश्यक जांच की प्रकृति आदि।

संविधान का अनुच्छेद 226 उच्च न्यायालय को मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन या किसी अन्य उद्देश्य हेतु उच्च विशेषाधिकार रिट जारी करने हेतु असाधारण क्षेत्राधिकारिता प्रदान करता है यह व्यापक तथा विस्तृत है। संविधान असाधारण क्षेत्राधिकारिता के प्रयोग में कोई बाधा नहीं डालता है। यह उच्च न्यायालय के विवेक पर छोड़ दिया गया है इसलिए, यह कानून के एक सामान्य प्रस्ताव के रूप में निर्धारित नहीं किया जा सकता है कि किसी भी मामले में उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत जीवन बीमा पॉलिसी के तहत दावे को लागू करने के लिए एक रिट याचिका पर विचार नहीं कर सकता है। ऐसी परिस्थितियों को पूरी तरह से गिनना न तो संभव है और न ही उचित है जिनमें रिट याचिका दायर करके इस तरह के दावे को लागू किया जा सकता है या नहीं । प्रश्न का निर्धारण कई कारकों पर निर्भर करता है जैसे, कि क्या एक रिट याचिकाकर्ता केवल अपने संविदात्मक अधिकारों को लागू करने का प्रयास कर रहा है या मामला विधि तथा संवैधानिक मुद्दों के महत्वपूर्ण प्रश्न उठाता है, उठाए गए विवाद की प्रकृति; विवाद के निर्धारण हेतु आवश्यक जांच की प्रकृति आदि मामलो पर प्रत्येक मामले के तथ्यों तथा परिस्थितियों में विचार किया जाना चाहिए।

जबकि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट याचिका पर विचार करने हेतु उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को पूरी तरह से अस्वीकार नहीं किया जा सकता है, न्यायालयों को विशुद्ध रूप से संविदात्मक अधिकारों





तथा दायित्वों को लागू करने हेतु दायर रिट याचिकाओं पर विचार नहीं करने में संवैधानिक शक्ति के अस्तित्व में आने के पश्चात् इन समस्त वर्षों में उच्च न्यायालयों द्वारा लगातार स्वयं लगाए गए प्रतिबंध को ध्यान में रखना चाहिए, जिसमें तथ्यों के विवादित प्रश्न शामिल हैं। यह स्थिति भी अच्छी तरह से स्थापित है कि यदि पक्षों मध्य किया गया अनुबंध से उत्पन्न होने वाले विवादों के समाधान हेतु एक वैकल्पिक मंच प्रदान करता है, तो पक्षों को उनके द्वारा सहमत मंच से संपर्क करना चाहिए तथा रिट अधिकार क्षेत्र में उच्च न्यायालय को उन्हें विवाद समाधान के सहमत मंच को दरकिनार करने की अनुमति नहीं देनी चाहिए। दोहराव की कीमत पर यह कहा जा सकता है कि उपरोक्त चर्चाओं में हमने केवल कुछ परिस्थितियों का संकेत दिया है जिनमें उच्च न्यायालय ने संविदात्मक अधिकारों तथा दायित्वों को लागू करने हेतु संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दायर याचिकाओं पर विचार करने से इनकार कर दिया है; चर्चाओं का उद्देश्य संपूर्ण होना नहीं है।

12. संविदात्मक तथा वाणिज्यिक दायित्वों के प्रवर्तन के मांग करने वाली एक रिट याचिका की स्थिरता के प्रश्न के संबंध में उपरोक्त कानूनी स्थिति पर हाल ही में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा मेसर्स इपजैकेट टेक्नोलॉजी इंडिया प्राइवेट लिमिटेड विरुद्ध एम. डी. उत्तर प्रदेश राजकीय निर्माण निगम लिमिटेड ने 08.05.2019 में दिये गये निर्णय में विस्तार से विचार किया गया है ।

13. उपरोक्त निर्णयों से जो सामान्य सिद्धांत निकाले जा सकते हैं, वे यह हैं कि ऐसे मामले में जहां राज्य तथा पीड़ित व्यक्ति के मध्य किया गया अनुबंध



एक गैर-सांविधिक प्रकृति का है तथा संबंध विशुद्ध रूप से पक्षों मध्य एक अनुबंध के संदर्भ में शासित होता है, ऐसी स्थितियों में संविदात्मक दायित्व व्यक्तिगत विधि के मामले हैं तथा अनुबंध से उत्पन्न होने वाले नागरिक दायित्व को लागू करने के लिए रिट नहीं होगा। ऐसे मामलों में उचित उपाय यह होगा कि क्षतिपूर्ति, निषेधाज्ञा या विनिर्दिष्ट अनुतोष या इस तरह के अन्य अनुतोष हेतु दीवानी न्यायालय में दीवानी मुकदमा दायर करना होगा। किसी भी वैधानिक जटिलता के अभाव में विशुद्ध संविदात्मक दायित्व एक रिट के माध्यम से लागू नहीं किया जाएगा।

14. संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उपचार एक असाधारण उपाय होने के कारण, इसका उपयोग पक्षों के व्यक्तिगत अधिकारों को घोषित करने के उद्देश्य से नहीं किया जाना चाहिए। संविदात्मक अधिकारों तथा क्षमताओं के प्रवर्तन के मामले में, पीड़ित पक्ष के लिए सिविल मुकदमा दायर करने का सामान्य उपचार उपलब्ध होने के कारण, यह न्यायालय ऐसे संविदात्मक दायित्वों को लागू करने के लिए अपने विशेषाधिकार रिट अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं कर सकता है।

15. उपरोक्त कानूनी स्थिति तथा मामले के तथ्यों तथा परिस्थितियों को देखते हुए, वर्तमान रिट याचिका केवल विलंब तथा बाधाओं के आधार पर तथा स्वीकार्यता के आधार पर भी खारिज की जानी चाहिए, वर्तमान रिट याचिका पर विचार करने के लिए इस न्यायालय की अनिच्छा याचिकाकर्ता को उनके लिए उपलब्ध अन्य उपयुक्त उपचार, यदि कोई हों, का लाभ उठाने से नहीं रोकेगी।



16. तदनुसार रिट याचिका खारिज कर दी जाती है।

सही/ –
(पी. सैम कोशी)
न्यायाधीश

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

